शृण्वतां पठतां सदा २ सनत्कुमार उवाच वक्ष्ये तीर्थं वरं पुण्यं श्राद्धादौ सर्वतारकं गयातीर्थमृषिश्रेष्ठ तीर्थेभ्यो ऽधिकं शृणु ३ गयासुरस्तपस्तेपे ब्रह्मा स्तत्र जगाम वै छलेन पातयित्वोर्व्यां शिलां धर्मो ह्यधारयत् ४ etc.

Gayae situs his capitis primi versibus circumscribi videtur: मुंडपृष्ठाच्च पूर्वस्मिन्पश्चिमे दक्षिणोत्तरे। सार्धक्रोशद्वयं मानं गयेति ब्रह्मणेरिता ॥२३॥ पंचक्रोशं गयाक्षेत्रं क्रोशमेकं गयाशिरः। तन्मध्ये सर्वतीर्थानि त्रैलोक्ये यानि संति वै ॥२४॥

Capite primo Gayae sanctitas celebratur, eoque loco manium cultus efficacissime fieri praedicatur. Deinde capp. 2–5. urbis origo enarratur, et singula sacella enumerantur[1]. Gayásura quum Brahmaṇi corpus sacrificii causa obtulisset, ut Gayá in perpetuum deorum sedes esset, obtinuisse dicitur. Capitibus 6. et 7. de ritibus agitur ab iis observandis, qui religionis causa Gayám veniunt. 8. Futura eorum praemia, qui sacraria singula adeunt.

Libellus hujus seculi initio negligenter exaratus est. (Wilson 489.)

118.

Foll. 23–45. Linn. 9. *Gayámáhátmyae* capita septem et octavi disticha duo. (A.)

Haec folia hujus seculi initio negligenter exarata sunt. (Mill 42[b].)

119.

In hoc volumine varia opuscula insunt. Lit. Devan. Charta Ind. Foll. 254. Long. 10. Lat. 4½.

Foll. 1–56. Linn. 10. *Kátyáyanímáhátmya* (Kátyáyaní deae majestas), quod e *Skandapuráṇae* parte, *Brahmottarakhaṇḍa* dicta, desumtum esse dicitur, capita 26. continens. Incipit: सिंहारूढां सर्वकार्यार्थसिद्धौ ध्याता सिद्धिं या ददात्येव पुंसां। विष्णोः शक्तिं नंदगोपपुत्री पायाद्भक्तान्वासुदेवस्य नित्यं ॥१ सूत उवाच ॥ शृण्वंतु ऋषयः सर्वे नैमिषारण्यवासिनः। कात्यायन्यास्तु माहात्म्यं सर्वदुःखक्षयंकरं ॥२ सर्वकामप्रदं नृणां नारीसौभाग्यवर्द्धनं। पुत्रपौत्रादिफलदं कृष्णभक्तिप्रदायकं ॥३ पुरा सरस्वतीतीरे ऋषयः सत्रमासतः। भृग्वाद्या नारदाद्याश्च महांतः शंसितव्रताः ॥४ तेषां कदाचित्संवृत्तो विचारो लोकहेतुना। कलौ कथं भविष्यंति जना वेदबहिर्मुखाः ॥५ न सत्यं न दया शौचं नार्जवं ब्रह्मचारिता। परदारपरद्रोहपरद्रव्यैकलिप्सुता ॥६ न वर्णाश्रमधर्माश्च गुरुशुश्रूषणं न हि। पाषंडधर्मबाहुल्यं भविष्यति कलौ युगे ॥७ तेन दुःखार्दितो लोकः कथं सद्गतिमाप्स्यति। भवतां च दयालूनां तपःसेप्स्यति वा कथं ॥८ इत्थं चिंतयतां तेषां मुनीनां नारदो ब्रवीत्। मा भैष्ट मुनयः सर्वे परदुःखासहिष्णवः। ९ प्रादुर्भूतं परं ब्रह्म देवकीजठरात्पुरा। वसुदेवो व्रजे यत्र निशीथे समवेशयत् ॥१० तत् कृष्णशब्दिते धाम ये भविष्यंति मानवाः। न तेषां धर्मकामार्थमोक्षाणां दुर्लभं क्षितौ ।११ इममर्थमहं विप्रा विधातारं जगद्गुरुं पुरा पृष्ट स चावादीत्पुत्र मे श्रूयतां वचः ।१२ etc.

Libellus ad celebrandum ritum quendam, mense Márgaṣírsha fieri solitum, scriptus est (मासि मार्गे शुक्लपक्षे प्रतिपत्प्रभृति व्रतं), quo ritu Kátyáyaní (i. e. Párvátí) una cum Kṛishṇa colebatur. Quare dea ubique Kṛishṇae 'Ενέργεια appellatur. विष्णुब्रह्ममहेशात्मा केशवो मार्गशीर्षके। मासाधिपतिरस्त्यस्य शक्तिः कात्यायनी ह्यहं ॥३९॥ मां पूजयंति तु भक्त्या ये मार्गशीर्षे सहकेशवां च। तेषां etc. Cap. 21. Quamquam hoc ipso in capite Brahmanis et Rudrae potestate creata esse dicitur. Jam vero auctor, ut utile dulci misceret, Kṛishṇae pueri res gestas adumbrat (capp. 6–20). Qua in re quum Harivanṣam, tum Vishṇupuráṇam secutus est. Idque satis aperte et ingenue confitetur: व्यासेन हरिवंशे च प्रोक्तां विस्तरतस्त्विमां (हरेर्लीलां)। पाराशरेण च प्रोक्तां वैष्णवेऽपि विशेषतः ॥९॥ Cap. 7. Quodsi capita supra dicta cum Vishṇupuráṇae lib. V. cap. 5 sqq. contuleris, auctorem nostrum illius vestigia presse secutum esse invenies. Plerumque enim ipsa verba repetivit. Addidit nonnulla, quae in neutro libro reperiuntur, et seriorem libri originem produnt[2]. Primum enim Nanda et Yaṣodá non homines fuisse dicuntur, sed Kaṣyapa et Aditi, a Brahmane in terram missi. Deinde Rádhá, divinae originis mulier a Kṛishṇa amata, inducitur: एका या सा तु चिच्छक्तिः सदानंदमयी परा। राधेति नाम्ना संप्रोक्ता राजते श्रीस्वरूपिणी ॥१४॥ Cap. 6. et रमापि स्वपतिं दृष्ट्वा गोपीजनरतिप्रदं। स्वमंशं तासु संधाय (संध्याय MS.) राधा भूत्वागमत्स्वयं ॥१६॥ Cap. 18. Denique in capite 19. canticum exstat, versibus in similem sonum desinentibus, scriptum. Incipit: जय जय गोकुलमंडन परिशोषितदुष्टपूतनाप्राण। जय जय शकटभंजन परिरंभितगोपगोपिकाप्राण ॥१३॥ Inde a capite 21. Kátyáyanis potentia, gigantum caede manifestata, praedicatur.

Haec codicis pars anno 1709 nitide quidem, neque tamen satis accurate exarata est. (Walker 181[a].)

120—122.

Voll. III. Lit. Devan. Charta Ind. Long. 13. Lat. 6½. Linn. var.

Continetur his voluminibus *Káṣíkhaṇḍa, Skandapuráṇae* pars, quo libro Váráṇasí (Benares) urbs ejusque sacraria celebrantur. Narratio a Vyása coram Súta tradita esse dicitur.

[1] Sanctissimum *Phalgutírtham* fuisse dicitur.

[2] Pastorum filiae (gopí) sedecim fuisse traduntur.